बी. ए. भाग-3
हिन्दी - प्रतिष्ठा
सप्तमपत्र - भाषा विज्ञान

रमेश कुमार यादव
हिन्दी - विभाग
डी. के. कालेज डुमराँव

भाषा की परिभाषा –

'भाषा' शब्द संस्कृत के 'भाष्' धातु से निष्पन्न है जिसका अर्थ है व्यक्त वाणी। एक प्रकार से इस धातु के अर्थ में ही भाषा का लक्षण विद्यमान है। व्यक्त वाणी का अर्थ है स्पष्ट और पूर्ण अभिव्यञ्जना; और वह उच्चरित या वाचिक भाषा से ही सम्भव है जिसमें सूक्ष्म-से सूक्ष्म अर्थों के बोधक अनन्त ध्वनि-संकेत हैं। भाषा मनुष्य की वाचिक भाषा के लिए ही संगत है, भाव-बोधन के अन्य माध्यमों के लिए नहीं, और उनके लिए यदि भाषा का प्रयोग होता है तो गौण अर्थ में ही।

किसी वस्तु की परिभाषा देना बड़ा कठिन कार्य है। परिभाषा बनाते समय तीन दोषों से बचने की चेष्टा करनी होती है और वे हैं- अव्याप्ति, अति-व्याप्ति और असम्भव। न्यायशास्त्र के अनुसार शुद्ध लक्षण परिभाषा वह जो अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असम्भव इन तीनों दोषों से शून्य हो –

तदेव हि लक्षणं यदव्याप्ति-अतिव्याप्ति-असम्भवरूप-दोषत्रय-शून्यम्।

अव्याप्ति- जितने पर परिभाषा लागू होनी चाहिए उतने पर लागू न हो। जैसे, कोई मनुष्य की परिभाषा बनाये कि मनुष्य उसे कहते हैं जिसने भाषा विज्ञान पढ़ा हो, तो इस परिभाषा में अव्याप्ति है। क्योंकि करोड़ों मनुष्य ऐसे हैं जिन्होंने भाषा

विज्ञान नहीं पढ़ा है। अतिव्याप्ति का अर्थ है कि जितने पर परिभाषा लागू होनी चाहिए उससे अधिक पर लागू हो जाये। जैसे कोई कहे कि मनुष्य उसे कहते हैं जिसके दो नेत्र हो।अत वे भी मनुष्य कहने के अधिकारी बन जायेंगे। असम्भव दोष तब होता है जब परिभाषा किसी पर लागू हो ही नहीं। जैसे यह कहना कि मनुष्य वह है जिसके सौ पैर हों। सौ पैरों के मनुष्य का होना सम्भव नहीं, इसलिए इस परिभाषा में असम्भव दोष है। इन तीनों दोषों से बचकर परिभाषा बनाना बहुत कठिन होता है। एक दोष से बचने के प्रयास में दूसरा दोष आ जाता है।

भाषा की परिभाषा भी इस कठिनाई का अपवाद नहीं है। भाषा विज्ञानियों ने भाषा की अनेक परिभाषाएँ दी हैं और आलोचना करने पर वे सर्वथा निर्दोष नहीं सिद्ध हो पातीं। किसी में कोई त्रुटि दीखती है तो किसी में कोई। अव्याप्ति, अतिव्याप्ति और असम्भव के अतिरिक्त और भी अनेक दोष हैं जिन पर परिभाषा बनाते समय ध्यान रखना होता है। उदाहरणार्थ परिभाषा में अनावश्यक शब्द का प्रयोग अर्थात् ऐसा शब्द दे देना जिससे कोई लाभ न हो। इसी तरह यदि परिभाषा ऐसी बन गयी जिससे प्रतिपाद्य स्पष्ट न हो तो इसे भी दोष ही कहेंगे।

इस सन्दर्भ में आधुनिक भाषाविज्ञानियों द्वारा दी गयी कतिपय परिभाषाओं को देख लेना उपयोगी होगा

ध्वन्यात्मक-शब्दों द्वारा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है। - हेनरी स्वीट।

मनुष्य ध्वन्यात्मक-शब्दों द्वारा अपना विचार प्रकट करता है। मानव मस्तिष्क वस्तुतः विचार प्रकट करने के लिए ऐसे शब्दों का निरन्तर प्रयोग करता है। इस प्रकार के कार्य-कलाप को ही भाषा की संज्ञा दी जाती है। - ओत्तो येस्पर्सन।

भाषा एक प्रकार का चिन्ह है, चिन्ह से तात्पर्य उन प्रतीकों से है, जिनके द्वारा मनुष्य अपना विचार दूसरों पर प्रकट करता है। ये प्रतीक भी कई प्रकार के होते हैं। जैसे नेत्रग्राह्य, श्रोत्रग्राह्य एवं स्पर्शग्राह्य। वस्तुतः भाषा की दृष्टि से श्रोताग्राह्य प्रतीक ही सर्व-श्रेष्ठ हैं।

ध्वन्यात्मक-शब्दों द्वारा हृदगत भावों तथा विचारों का प्रकटीकरण ही भाषा है। - पी.डी. गुणे।

जिन ध्वनि-चिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है, उसे भाषा कहते हैं। - बाबू राम सक्सेना

भाषा यादृच्छिक ध्वनि-संकेतों की वह व्यवस्था है जिसके माध्यम से सामाजिक समूह परस्पर सहयोग करते हैं - ब्लॉख तथा ट्रेगर।

उपर्युक्त सभी परिभाषाओं में किसी न किसी प्रकार की अपूर्णता प्रतीत होती है जिससे भाषा का निर्दुष्ट लक्षण हमारे सामने नहीं आता। स्वीट और येस्पर्सन के लक्षण में मूलतः एक ही बात दुहराई गयी है कि भाषा ध्वन्यात्मक होती है एवं विचारों को प्रकट करने का काम करती है। बाबू रामसक्सेना तथा सुकुमार सेन भी अन्य परिभाषायें की तुलना में बहुत सफल परिभाषा नहीं बना सके।

भाषा की सर्वांगीण एवं संक्षिप्त परिभाषा निम्नलिखित प्रकार से बनायी जा सकती है: भाषा, यादृच्छिक, रूढ़, उच्चरित संकेत की वह प्रणाली है जिसके माध्यम से मनुष्य परस्पर विचार-विनिमय, सहयोग अथवा भावाभिव्यक्ति करते है।

रमेश कुमार यादव
असिस्टेंट- प्रोफेसर
हिन्दी - विभाग
डी. के. कालेज,
डुमराँव बक्सर